नोबल पुरस्कार 2011

विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी एवं रेणुका चतुर्वेदी

• शरीर क्रियाविज्ञान

अब सध सकेंगे असाध्य रोग

प्रकटतः स्वच्छ वातावरण में रहते हुए भी हम सदैव रोगाणुओं से घिरे रहते हैं। विषाणु, जीवाणु, कवक व अन्य परजीवी हम पर निरन्तर आक्रमण करते रहते हैं। हमारी प्रतिरक्षा व्यवस्था निरन्तर सजग व सक्रिय रह कर हमें इन दुश्मनों के हमलों से बचाती है। शरीर में उपस्थित प्रतिरक्षा व्यवस्था की संरचना व कार्य प्रणाली को समझने के प्रयासों का इतिहास बहुत पुराना एवं विस्तृत है। 2011 के नोबल पुरस्कार विजेताओं ने प्रतिरक्षी तंत्र की कार्य प्रणाली के मूलभूल सिद्धान्तों की खोज कर चिकित्साशास्त्र को एक क्रान्तिकारी उपहार दिया है। इन खोजों के कारण संक्रामक रोगों से बचने के साथ शोथ रोगों को रोकने में भी मदद मिलेगी। प्रतिरक्षा तंत्र का उपयोग एड्स, केंसर जैसे घातक रोग को भी नष्ट करने में हो सकेगा।

वैज्ञानिक लम्बे समय से उन अणुओं की तलाश में थे जो गुप्तचर जैसा व्यवहार करते हैं। रोगाणुओं के शरीर में प्रवेश करते ही यह सूचना अर्जित प्रतिरक्षा तन्त्र को देते हैं। इस सूचना के आधार पर ही अर्जित प्रतिरक्षा तन्त्र रोगाणुओं के विरुद्ध कार्यवाही कर पाता है। ब्रूस ब्यूटलर तथा जूल्स हॉफमैन ने उन ग्राही प्रोटीन अणुओं को खोज निकाला है जो संक्रामक सूक्ष्म जीवों को पहचान कर हमारी प्रतिरक्षा व्यवस्था को रोगाणुओं के विरुद्ध सक्रिय करता है। रोगों से लड़ने की कार्य योजना का यह प्रथम और सर्वाधिक महत्पूर्ण कदम होता है। राल्फ स्टीनमैन ने प्रतिरक्षा तन्त्र के विशिष्ट घटक द्रुमाक्षी कोशिकाओं की कार्य प्रणाली को खोजा है। द्रुमाक्षी कोशिकाएं उपार्जित प्रतिरक्षा व्यवस्था को सक्रिय एवं नियन्त्रित करती हैं। इन्हीं खोजों के लिए इन तीन वैज्ञानिकों को 2011 का औषध या कार्यिकी के नोबल पुरस्कार हेतु चुना गया है।

ब्रूस ए. ब्यूटलर

जूल्स ए. हॉफमैन

राल्फ एम. स्टीनमैन

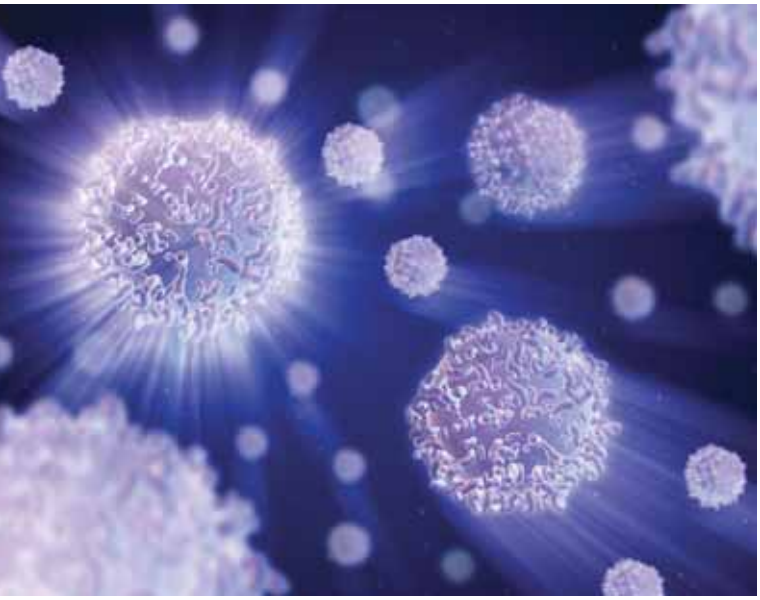

इस दोहरी प्रतिरक्षा व्यवस्था के कारण, सदैव दुश्मनों (रोगाणुओं) से घिरा होने के बावजूद हमारा शरीर सुरक्षित रहता है

शरीर की प्राथमिक सुरक्षा पंक्ति वंशानुगत प्रतिरक्षा होती है। यह शरीर पर आक्रमण करने वाले रोगाणुओं को नष्ट करती है। इस प्रक्रिया में उत्पन्न शोथ रोगाणुओं के हमले से उत्पन्न कुप्रभावों को नियंत्रित करता है। वंशानुगत प्रतिरक्षा तेजी से कार्य करती है मगर इसमें याददाश्त नहीं होती। रोगाणु जब प्राथमिक प्रतिरक्षा व्यवस्था को पार कर आगे बढ़ते हैं तो सुरक्षा की दूसरी पंक्ति, अर्जित प्रतिरक्षा को मुबाबले के लिए कहा जाता है। टी व बी कोशिकाओं से बनी अर्जित प्रतिरक्षा व्यवस्था सेना की तरह कार्य करती है। जिस तरह सेना दुश्मन को मारने के साथ उसके द्वारा बिछाई बारूदी सुरंगों आदि की सफाई करती है उसी प्रकार ये भी मारक कोशिकाएं उत्पन्न कर संक्रमित कोशिकाओं को नष्ट करती है तथा प्रतिरक्षी बना कर रोगाणुओं द्वारा छोड़े गए विष को नष्ट करती है। संक्रमण से निपटने के बाद अर्जित प्रतिरक्षा तंत्र दुश्मनों को याद भी रखती है। इसी कारण पुनः आक्रमण होने पर सुरक्षातंत्र तेजी से कार्यवाही कर पाती है। इस दोहरी प्रतिरक्षा व्यवस्था के कारण, सदैव दुश्मनों (रोगाणुओं) से घिरा होने के बावजूद हमारा शरीर सुरक्षित रहता है। हर व्यवस्था के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों पक्ष होते हैं। अर्जित प्रतिरक्षा का नकारात्मक पक्ष भी है। यदि अर्जित प्रतिरक्षा की सक्रियता देहरी सीमा से बहुत न्यून हो तो हमारे शरीर में उत्पन्न कोई अणु ही दुश्मन सा कार्य कर शोथ रोग उत्पन्न कर देता है।

खोजे प्रतिरक्षा के सिद्धान्त

20वीं शताब्दी में, नोबल पुरस्कार से सम्मानित, ऐसे कई अनुसंधान हुए जिन्होंने प्रतिरक्षा तंत्र के घटकों के प्रति हमारी समझ को बढ़ाया। उन्हीं से हमने जाना कि टी कोशिकाएं शरीर में प्रविष्ट होने वाले बाहरी पदार्थों की पहचान कर उन्हें नष्ट करने में मदद करती है। मानव हित को सुरक्षित करने हेतु इतना ही पर्याप्त नहीं था। अभी बहुत कुछ जानना शेष था। ब्यूटलर, हॉफमैन तथा स्टीनमैन के अनुसंधानों के पूर्व यह स्पष्ट नहीं था कि वंशानुगत प्रतिरक्षा तन्त्र किस प्रकार प्रारम्भ होता है। वंशानुगत व अर्जित प्रतिरक्षा तन्त्र के बीच मध्यस्त की भूमिका कौन निभाता है?

जूल्स हॉफमैन तथा उनके साथियों ने पहल करते हुए 1996 में यह ज्ञात किया कि फलमक्खियाँ (*ड्रोसोफिला मेलानोगास्टर*) संक्रमण से अपनी रक्षा किस प्रकार करती हैं। हॉफमैन व उनके साथियों ने फलमक्खी के टोल जीन के म्यूटेन्टों को जीवाणु व अन्य रोगाणुओं से संक्रमित कराया। इस प्रयोग से यह तथ्य सामने आया कि उत्परिवर्तित टोल जीन युक्त फलमक्खियाँ संक्रमण का ठीक से मुकाबला नहीं कर पाती हैं। वे कवक संक्रमण के कारण मर जाती हैं।

शरीर की प्राथमिक सुरक्षा पंक्ति वंशानुगत प्रतिरक्षा होती है। यह शरीर पर आक्रमण करने वाले रोगाणुओं को नष्ट करती है। इस प्रक्रिया में उत्पन्न शोथ रोगाणुओं के हमले से उत्पन्न कुप्रभावों को नियंत्रित करता है। वंशानुगत प्रतिरक्षा तेजी से कार्य करती है मगर इसमें याददाश्त नहीं होती। रोगाणु जब प्राथमिक प्रतिरक्षा व्यवस्था को पार कर आगे बढ़ते हैं तो सुरक्षा की दूसरी पंक्ति, अर्जित प्रतिरक्षा को मुबाबले के लिए कहा जाता है। टी व बी कोशिकाओं से बनी अर्जित प्रतिरक्षा व्यवस्था सेना की तरह कार्य करती है।

1995 में नोबल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक क्रिस्टीएने एन वोल्हार्ड ने भ्रूण विकास में टोल जीन की भूमिका का पता लगाया था। टोल जर्मन भाषा का शब्द है जिसका अर्थ होता है आश्चर्यजनक महान आदि। जीन के प्रभाव के विषय में जानकर वोल्हार्ड ने अपनी प्रथम प्रतिक्रिया टोल शब्द से व्यक्त की थी। फलमक्खियों पर किए गए प्रयोग से हॉफमैन समूह ने यह जाना कि टोल जीन के कारण उत्पन्न प्रोटीन, रोगजनक सूक्ष्मजीवों की पहचान करने में सहयोग देता है। इस अनुसंधान से यह स्पष्ट हुआ कि संक्रमण से सुरक्षा हेतु टोल जीन का सक्रिय होना आवश्यक है।

ब्रूस ब्यूटलर किसी ऐसे ग्राही की तलाश में थे जो जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न आन्तरिक विष लिपोपॉलीसैकेराइड (एलपीएस) को बांध सके। एलपीएस परपोषी के शरीर में सेप्टिक प्रघात की स्थिति उत्पन्न करते हैं। सेप्टिक प्रघात प्रतिरक्षा तन्त्र की अति संवेदनशीलता के कारण उत्पन्न वह स्थिति है जो जीव के लिए प्राण घातक भी हो सकती है। 1998 में ब्यूटलर समूह ने खोज निकाला कि एलपीएस का प्रतिरोध कर सकने वाले चूहों में एक उत्परिवर्तित जीन उपस्थित थी। इस उत्परिवर्तित जीन का प्रभाव टोल- जीन के समान होता है। यहाँ टोल जीन समग्राही, छलिया एलपीएस ग्राही में बदल जाता है। यह ग्राही जब एलपीएस को अपने से बांधता है तो ऐसे संकेत उत्पन्न होते हैं जो शोथ का कारण बनते हैं। जब एलपीएस की मात्रा अधिक होती है तो सेप्टिक प्रघात की स्थिति उत्पन्न होती है। इस अनुसंधान से ज्ञात हुआ कि रोगजनक सूक्ष्म जीवों से सामना होने पर, वंशानुगत प्रतिरक्षा को सक्रिय करने हेतु, फलमक्खी व स्तनधारी दोनों में एक समान अणुओं का निर्माण होता हैं। इस तरह आनुवंशिक प्रतिरक्षा के संवेदकों (गुप्तचरों) को अन्ततः खोज ही लिया गया।

अनुमान है कि हॉफमैन तथा ब्यूटलर के अनुसंधानों से आनुवंशिक प्रतिरक्षा के क्षेत्र में अनुसंधानों का एक ज्वार उत्पन्न हो जाएगा। अभी तक मनुष्य तथा चूहे में एक दर्जन के लगभग टोल जीन समग्राही पहचाने जा चुके हैं। इनमें से प्रत्येक में जीवाणुओं व अन्य सूक्ष्म जीवों में पाए जाने वाले अणुओं को पहचानने की सामर्थ्य होती है। यह देखा गया है कि जिन जीवों में इन ग्राहियों के उत्परिवर्तित रूप पाए जाते हैं उनमें संक्रमित होने की संम्भावना अधिक होती है। जबकि टोल जीन समग्राही के कुछ अन्य वंशानुगत वेरिएन्ट उपस्थित होने पर स्थायी शोथ रोगों की संभावना बढ़ जाती है।

नई प्रकार की कोशिका की खोज

2011 के औषध के नोबल पुरस्कार में राल्फ स्टीनमैन को पचास प्रतिशत की भागीदार द्रुमाक्षी कोशिकाओं पर महत्वपूर्ण खोज के कारण दी गई है। द्रुमाक्षी कोशिकाओं का सर्व प्रथम वर्णन उन्नीसवीं शताब्दी में पॉल लैंगरहैन्स ने किया था। इस कारण इन्हें लैंगरहैन्स की कोशिकाएं कहा गया। स्टीनमैन ने उन्हें द्रुमाक्षी (डेन्ड्रीटिक) कोशिका नाम दिया। तंत्रिका कोशिकाओं के समान इन कोशिकाओं की सम्पूर्ण समूह पर द्रुमाक्षों के पाए जाने के कारण इन्हें द्रुमाक्षी कोशिका नाम दिया गया है। द्रुमाक्षों की उपस्थिति के कारण इन कोशिकाओं की सतह का क्षेत्रफल बहुत बढ़ जाता है। जिससे इनकी संवेदनशीलता बहुत बढ़ जाती है। अत्यधिक संवेदनशीलता के कारण ये वातावरण में उपस्थित सूक्ष्म जीवों को तुरन्त पहचान लेती हैं। द्रुमाक्षी कोशिकाओं का

जीवनकाल मात्र कुछ दिनों का होता है जिसे कुछ सप्ताह तक बढ़ाया जा सकता है। मनुष्य के अतिरिक्त अन्य स्तनधारियों में भी द्रुमाक्षी कोशिकाएं पाई जाती हैं मगर उनकी कार्य प्रणाली कुछ भिन्न होती है।

1973 में राल्फ स्टीनमैन व जानविल ए कोहन ने अर्जित प्रतिरक्षा के साथ द्रुमाक्षी कोशिकाओं के सम्बन्ध का पता लगाया था। जीवजगत में अर्जित प्रतिरक्षा का जन्म जबड़े वाले कशेरुकियों के साथ माना जाता है। जब रोगजनक सूक्ष्म जीव वंशानुगत प्रतिरक्षी तन्त्र के सम्पर्क में आते हैं तथा उनसे उत्पन्न एन्टीजन की मात्रा एक सीमा से अधिक होती है तो अर्जित प्रतिरक्षा सक्रिय हो जाती है। स्टीनमैन का अनुमान था कि द्रुमाक्षी कोशिकाएं प्रतिरक्षा तन्त्र की कार्य प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अपने अनुमान की पुष्टि हेतु स्टीनमैन ने अनुसंधानों की एक श्रृंखला चलाई। उन्होंने यह जानने का प्रयास किया कि क्या द्रुमाक्षी कोशिकाएं टी कोशिकाओं को सक्रिय करने का कार्य करती है? जैसा कि पहले भी उल्लेख किया गया है कि टी कोशिकाएं अर्जित प्रतिरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। टी कोशिकाओं में याददाश्त पाई जाती है जो सूक्ष्म रोगाणओं द्वारा उत्पन्न एन्टीजनों की पहचान करती है। संवर्धन माध्यमों में किए गए प्रयोगों के आधार पर स्टीनमैन ने यह बताया कि द्रुमाक्षी कोशिकाओं की उपस्थिति में टी कोशिकाएं सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न पदार्थों के विरुद्ध विविध प्रकार की अनुक्रियाएं करती हैं। प्रारम्भ में इन प्रयोगों को शंका की दृष्टि से देखा गया था। अन्ततः स्टीनमैन यह स्थापित करने में सफल रहे कि द्रुमाक्षी कोशिकाओं में टी कोशिकाओं को प्रभावित करने की अद्वितीय क्षमता पाई जाती है। इस खोज पर स्टीनमैन को 2007 में आधारभूत चिकित्सकीय अनुसंधान का अल्बर्ट लास्कर अवार्ड प्रदान किया गया।

स्टीनमैन तथा अन्य वैज्ञानिकों ने आगे यह जानने का प्रयास किया कि सूक्ष्मजीवों द्वारा उत्पन्न पदार्थों के सम्पर्क में आने पर, अर्जित प्रतिरक्षा तंत्र, यह निर्णय कैसे करता है कि वह सक्रिय हों या नहीं ? यह देखा गया कि अर्जित प्रतिरक्षा तन्त्र की अनुक्रिया तथा द्रुमाक्षी कोशिकाओं के संवेदक मिलकर टी कोशिकाओं को नियंत्रित करते हैं। इस अनुसंधान से यह पता चला है कि प्रतिरक्षा द्वारा रोगाणुओं द्वारा उत्पन्न अणुओं (प्रतिजन) के विरोध में तो अनुक्रिया प्रदर्शित की जाती है जबकि स्वयं के शरीर में उत्पन्न अणुओं को अनदेखा किया जाता है।

शरीर क्रियाविज्ञान या आयुर्विज्ञान के लिए दिए जाने वाले नोबल पुरस्कार को इस बार दो भागों में बांट कर तीन लोगों को दिया गया है। प्रथम भाग ब्रूस ए. ब्यूटलर व जूल्स ए. हॉफमैन को संयुक्त रूप से दिया गया है। दूसरा भाग राल्फ एम. स्टीनमैन को दिया गया है।

चिकित्सकीय महत्व

2011 के नोबल पुरस्कार के लिए चयनित वैज्ञानिकों का कार्य रोगों से बचने व रोगों को नियन्त्रित करने की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। इनसे प्रतिरक्षी तन्त्र को सक्रिय एवं नियन्त्रित करने की कार्यविधि को नई दृष्टि प्राप्त हुई है। ईलाज की नई विधियाँ विकसित करने में मदद मिलेगी। विभिन्न रोगों के नए टीके विकसित हो सकेंगे। प्रतिरक्षा तन्त्र का आक्रमण केंसर व अन्य गांठों पर करवा कर उन्हें नियन्त्रित किया जा सकेगा। इन खोजों से यह भी पता लगाया जा सकेगा कि कभी-कभी प्रतिरक्षा तन्त्र स्वयं अपने शरीर के ऊतकों पर आक्रमण किस कारण कर देता है। इन खोजों से असाध्य शोथ रोगों की चिकित्सा भी सम्भव हो सकेगी।

एक पुरस्कार तीन दावेदार

औषध या कार्यिकी के लिए दिए जाने वाले नोबल पुरस्कार को इस बार दो भागों में बांट कर तीन लोगों को दिया गया है। प्रथम भाग ब्रूस ए. ब्यूटलर व जूल्स ए. हॉफमैन को संयुक्त रूप से दिया गया है। दूसरा भाग राल्फ एम. स्टीनमैन को दिया गया है।

संक्षिप्त जीवन परिचय

• ब्रूस ए. ब्यूटलर

ब्रूस ए. ब्यूटलर का जन्म 29 दिसम्बर 1957 को संयुक्त राज्य अमेरिका

ब्रूस ए. ब्यूटलर

के शिकागो शहर में हुआ। ब्यूटलर ने 1881 में शिकागो विश्वविद्यालय से डॉक्टर ऑफ मेडीसिन की उपाधि प्राप्त की तथा न्यूयार्क के रॉकफेलर संस्थान में वैज्ञानिक के रूप में कार्य करने लगे। बाद में दक्षिण-पश्चिमी मेडीकल केन्द्र, डलास में कार्य करते हुए लिपोपॉलीसैकेराइड की खोज की। इसके बाद ब्यूटलर स्क्रिप्प्स अनुसंधान संस्थान, ला-जोला चले गए। कुछ दिन बात ब्यूटलर पुनः टेक्सास विश्वविद्यालय के दक्षिण-पश्चिमी मेडीकल केन्द्र, डलास लौट आए। वे इस संस्थान के परपोषी प्रतिरक्षा आनुवंशिकी केन्द्र में प्रोफेसर के रूप में कार्य कर रहे हैं। उनका कहना है कि बचपन में पढ़ी गई पुस्तक 'दी माइक्रोब हंटर' ने उन्हें बहुत प्रभावित किया तथा अपने पिता की प्रयोगशाला में प्राप्त प्रशिक्षण ने जीवविज्ञान के प्रति जिज्ञासा जगाई।

• जूल्स ए. हॉफमैन

वर्तमान में फ्रान्स के राष्ट्रीय विज्ञान अनुसंधान केन्द्र के निदेशक के रूप में कार्य कर रहे जूल्स हॉफमैन का जन्म इक्टेतनाक लक्जमबर्ग में 2 अगस्त 1941 में हुआ था। हॉफमैन ने स्ट्रासबर्ग विश्वविद्यालय, फ्रान्स में अध्ययन करते हुए 1969 पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त की। जर्मनी के मारबर्ग विश्वविद्यालय से पश्च-डॉक्ट्रेट प्रशिक्षण प्राप्त कर पुनः स्ट्रासबर्ग लौट आए। हॉफमैन 1977 से 2009 तक वहाँ की प्रयोगशाला का नेतृत्व करते रहे। इस दौरान हॉफमैन ने कोशिकीय-अणु जीवविज्ञान संस्थान के

जूल्स ए. हॉफमैन

निदेशक की भूमिका का भी निर्वाह किया। 2007-2008 में फ्रान्स की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी के अध्यक्ष रहे। नोबल पुरस्कार से पूर्व कई प्रकार के पुरस्कार इनको मिल चुके हैं।

• राल्फ एम. स्टीनमैन

राल्फ एम. स्टीनमैन का जन्म 1943 में कनाडा के मॉन्ट्रियल शहर में हुआ। स्टीनमैन ने मॉन्ट्रियल के

राल्फ एम. स्टीनमैन

मेकगिल विश्वविद्यालय में जीवविज्ञान तथा रसायन विज्ञान का अध्ययन किया। इसके बाद संयुक्त राज्य अमेरिका के वोस्टन शहर के हारवर्ड मेडीकल स्कूल से 1968 में डॉक्टर ऑफ मेडीसिन की उपाधि प्राप्त की। बाद में वे रॉकफेलर संस्थान से जुड गए और 1988 में प्रतिरक्षा विज्ञान के प्रोफेसर बने। स्टीनमैन अग्नाशय के केन्सर से पीड़ित थे तथा अपने अनुसंधानों के बल पर अपनी चिकित्सा भी कर रहे थे। दुःख की बात यह है कि वे अपने नोबल पुरस्कार की घोषणा नहीं सुन सके। घोषणा के मात्र 4 दिन पूर्व 30 सितम्बर 2011 वे वहाँ चले गए जहाँ इन पुरस्कारों का कोई महत्व नहीं होता। यह सच है कि नोबल पुरस्कार मरणोपरान्त नहीं दिए जाते। इस बार भी नहीं दिया गया। नोबल पुरस्कार की घोषणा होने तक नोबल समिति के पास स्टीनमैन की मृत्यु की सूचना नहीं थी। बाद में प्राप्त सूचना के आधार पर समिति ने अपने निर्णय को वापस लेने से मना कर दिया। स्टीनमैन नोबल पुरस्कार विजेता कहलाएंगे। स्टीनमैन को इस वर्ष नोबल पुरस्कार की पूरी उम्मीद थी। बीमारी के कारण एक दिन उनकी तबियत अधिक खराब थी और घरवाले परेशान थे तो उन्होंने कहा 'चिन्ता मत करो, नोबल पुरस्कार की घोषणा होने तक तो मुझे जिन्दा रहना ही है क्योंकि मेरे मरने पर वे पुरस्कार नहीं देंगे'।

• रसायन विज्ञान

यह पुरस्कार युवा वैज्ञानिकों को प्रेरणा देता है कि वे अनुसंधान से प्राप्त सत्य पर डटे रहें। अन्तिम विजय सत्य की ही होती है।

कुदरत का कमाल क्वासी-क्रिस्टल

2011 का रसायन का नोबल पुरस्कार इजरायली वैज्ञानिक डैन शेचमैन को क्वासी क्रिस्टल के अनुसंधान पर घोषित किया गया है। इस अनुसंधान ने पदार्थ की संरचना नए दृष्टि से देखने की प्रेरणा दी है। इसकी पुरस्कार ने विज्ञान के क्षेत्र में छाई उस जड़ता को दूर किया है जिसके कारण नए विचार को स्थापित वैज्ञानिकों को समझाने में युवा वैज्ञानिकों को संघर्ष करना होता है। यह पुरस्कार युवा वैज्ञानिकों को प्रेरणा देता है कि वे अनुसंधान से प्राप्त सत्य पर डटे रहें। अन्तिम विजय सत्य की ही होती है।

प्रत्येक ठोस पदार्थ अपनी संरचना में किसी न किसी व्यवस्था का प्रदर्शन करता है। अक्रिस्टलीय माने जाने वाले सिलिका काँच में भी सिलिकोन व ऑक्सीजन के परमाणु एक निश्चित क्रम में विन्यासित होते हैं। 18वीं शताब्दी में यह तथ्य स्थापित हो गया था कि क्रिस्टल में परमाणु इकाई कोश के रूप में आवर्ती क्रम में लगे होते हैं। इसी कारण क्रिस्टल को परिभाषित करते हुए कहा गया कि उसमें परमाणु, अणु या आयनों के नियमित प्रतिरूप त्रि आयाम में आवर्ती क्रम में जमे होते हैं। बहुत बड़ी संख्या में इकाई कोश मिल कर किसी क्रिस्टल को आकार देते हैं।

क्रिस्टल का एक प्रमुख लक्षण उनकी आकाश समूह सममिति होता है। 19वीं शताब्दी में क्रिस्टलों में 230 आकाश समूहों का वर्णन किया गया था। यह भी बताया गया कि घूर्णी सममिति में 2,3,4 व 6 वलन के अक्ष होते हैं। 5,7 या अधिक वलन के घूर्णों को स्वीकार नहीं किया गया। 4 व 6 वलन की अक्ष से स्थान्तरीय सममिति के प्रमाण जुटाए गए जबकि 5 वलन व्यवस्था को असंभव मानते हुए कोई प्रमाण नहीं दिया गया। डैन शेचमैन की परेशानी यही थी कि उन्हें अपने प्रयोग से क्रिस्टल रचना में असम्भव माने जाने वाला प्रतिरूप दिखाई दिया था।

नए प्रतिरूप की खोज

वह 8 अप्रेल 1982 की एक सामान्य सी सुबह थी जिसे यह ज्ञात नहीं था कि भविष्य उसे जल्दी ही अविस्मरणीय बना देगा। उस सुबह डैन शेचमैन अपनी प्रयोगशाला में एल्यूमिनियम-मेंग्नीज मिश्रधातु का अध्ययन कर रहे थे। पदार्थ में परमाणु स्तर की व्यवस्था को समझने हेतु डैन ने इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी चालू किया। इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी ने जो चित्र प्रस्तुत किया उसे देख डैन का सिर चकरा गया। डैन ने देखा कि चित्र में चमकीले बिन्दुओं के कई संकेन्द्री वृत्त बने हुए थे। प्रत्येक वृत्त में समान दूरी पर 10 बिन्दु चमक रहे थे। डैन को ऐसी आकृति की कोई अपेक्षा नहीं थी। अचानक सामने आई वह आकृति विज्ञान के प्रचलित तथ्यों के विपरीत थी। जो दिखाई दे रहा था उसकी सत्यता पर डैन को बिल्कुल भी विश्वास नहीं हो रहा था।

डैन के मन में विचार आया कि शायद उनसे कोई भूल हुई है। उन्होंने सोचा कि दहकती मिश्र धातु को द्रुतगति से शीतल करने के कारण पदार्थ परमाणु व्यवस्था गड़बड़ा गई है। उन्होंने चित्र में बने प्रतिरूप को गौर से देखा। उसमें किसी प्रकार की अव्यवस्था नही दिखाई दे रही थी। चित्र एक बहुत ही व्यवस्थित प्रतिरूप को प्रदर्शित कर रहा था। प्रचलित धारणा के अनुसार 4 या 6 के वलन तो सम्भव थे मगर उन्हें प्राप्त में चित्र में 10 के वलन दिख रहे थे जिनका होना असम्भव सी बात थी। वे समझ नहीं पा रहे थे कि माजरा क्या है। बिन्दुओं को गिनने में तो भूल नहीं हो रही, यह सोच कर उन्होंने वृत्त में उपस्थित बिन्दुओं को कई बार गिना। संख्या 10 ही आई। उन्होंने अपनी डायरी में लिखा 10 वलन???। (तीन प्रश्न वाचक एक साथ)। साथ ही यह भी लिखा कि "ऐसा कोई रचयिता नहीं हो सकता।" डैन के लिए वह घटना उतनी ही असंभव थी जितना कि केवल षटभुजीय टुकडों को जोड़ कर गोल-सुडौल फुटबॉल बना लेना। डैन शेचमैन के पास इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी के साथ काम करने का पर्याप्त अनुभव था मगर 10 वलन वाली क्रिस्टलीय रचना उन्होंने पहले कभी नहीं देखी थी। अन्तर्राष्ट्रीय क्रिस्टलोग्राफी की सूचियों में भी उस तरह की रचना का कोई उल्लेख नहीं था। प्रश्न विकट था मगर हल निकट नहीं था।

विभिन्न क्रिस्टलों में परमाणु विभिन्न प्रतिरूपों में जमे दिखाई देते हैं। इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी से प्रादर्श के एक कोण से चित्र प्राप्त करने पर जो प्रतिरूप प्राप्त होता है वह दूसरे कोण से देखने पर भिन्न हो सकता है। कई कोणों से समान प्रतिरूप का दिखाई देना ही सही स्थिति बताता है। इस कसौटी पर पंच, सप्त या अधिक वलन व्यवस्था के खरी नहीं उतरने के कारण यह मान लिया गया कि क्रिस्टल में ये प्रतिरूप नहीं पाए जाते हैं। डैन ने अपने अध्ययन द्वारा स्थापित किया कि क्रिस्टल में 10 वलन की अन-आवर्ती स्थिति मौजूद होती है। डैन की बात रसायनशास्त्र की पुस्तकों में लिखि बातों से भिन्न थी। इस कारण डैन द्वारा प्रस्तुत तथ्यों को स्वीकारने को कोई भी तैयार नहीं था। सब उसे गलत मान उसका मजाक उड़ाने को तैयार रहते थे।

जीत की राह पर

1983 में डेन की पीएच. डी. पूरी होने के बाद उसे आइलान ब्लेच नामक एक अच्छा सहायक उपलब्ध हो गया। दोनों ने मिल कर प्रयोग में प्राप्त तथ्यों के आधार पर क्रिस्टल संरचना को समझने का प्रयास किया। इस तरह जो चित्र उभरा उसे उन्होंने एक शोध पत्र का रूप दे प्रकाशन हेतु भेजा। जर्नल ऑफ एप्लाइड फिजिक्स को प्रकाशनार्थ भेजा गया वह शोध पत्र खोटे सिक्के की तरह तुरन्त उनके पास लौट आया। स्थापित वैज्ञानिकों ने डैन के विचारों को प्रकाशन योग्य नहीं समझा था। निराश डैन ने अपनी व्यथा प्रसिद्ध भौतिकशास्त्री जोहन काह्न के सामने रखी। उन्हें अपना शोध पत्र दिखाया तथा उसमें कमी बताने की गुहार की। विषय की गम्भीरता को समझ जोहन काह्न ने फ्रान्स के प्रसिद्ध क्रिस्टलोग्राफर डेनिस ग्रेसियास से मदद मांगी। ग्रेसियास का जवाब दृढ़ था। ग्रेसियास ने कहा कि डैन शेचमैन के अनुसंधान सही हैं।

डैन शेचमैन

एक सच्चे वैज्ञानिक के नाते डैन शेचमैन इन अपमानों को सहन करते हुए भी सत्य के मार्ग पर चलते रहे। उन्होंनें पुस्तकों में लिखी बातों की तुलना में अपने प्रयोगों से प्राप्त तथ्यों को अधिक महत्व दिया। क्रिस्टेलोग्राफी के विशेषज्ञ धीरे-धीरे इनकी बातों से सहमत होते गए और नोबल के रूप में अन्ततः इन्हें विश्व मान्यता मिल गई। शेचमैन की पत्नी ट्जीपोरा शेचमैन हैफा विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं। इनके एक पुत्र व तीन पुत्रियाँ उच्च अध्ययन कर विश्व बिरादरी को पिता की तरह ही कोई नई सौगात देने की तैयारी कर रहे हैं।

नवम्बर 1984 में शोध पत्र काह्न, ब्लेच, ग्रेसियास तथा शेचमैन के संयुक्त नाम से फिजिकल रिव्यू लेटर्स में प्रकाशित हुआ। पत्र में इस बात का खण्डन किया गया था कि प्रत्येक क्रिस्टल में आवर्ती प्रतिरूप बारम्बार उपस्थित होते हैं। उस शोध पत्र ने एक विस्फोटक का कार्य किया। डैन शेचमैन के कई आलोचक और सामने आ गए। इसका एक लाभ यह हुआ अब डैन शेचमैन के विचार बहुत अधिक लोगों तक पहुँच गए। इससे उनके समर्थन में और भी कई लोग जुटने लगे। जो बातें स्वयं डैन को भी स्पष्ट नहीं थी वे भी अब समझ में आने लगी थीं। कठिनाई का दौर समाप्त हो गया था। चित्राम, गणित सूत्र आदि विभिन्न स्रोतों से कई प्रमाण डैन के मॉडल के पक्ष में जुटने लगे।

1966 में एक अमरीकी गणितज्ञ ने 20,000 प्रकार की टाइलों से अन-आवर्ती चित्राम बनाने का सैद्धान्तिक दावा किया था। ऐसा चित्राम जिसमें किसी भी प्रारूप को दोहराया नहीं गया हो। उस गणितीय सिद्धान्त को प्रयोगिक रूप देना सम्भव नहीं हुआ। 1970 में एक ब्रिटिश गणितज्ञ रोजर पेनरोज ने मात्र दो प्रकार की टाइलों से ही वांछित अन-आवर्ती चित्राम बना दिया। इस प्रकार लम्बे समय से चली आ रही एक समस्या का समाधान हो गया था। चित्राम का यह तथ्य डैन के मॉडल के पक्ष को मजबूत करने वाला था। रसायनज्ञों की बढ़ती रुचि के कारण अरब देशों की कुछ मस्जिदों के गुम्बदों में बने अन-आवर्ती चित्रामों का अध्ययन- विश्लेषण भी होने लगा था। इनके प्रभाव स्वरूप दिसम्बर 1984 में डैन ने एक लेख लिखकर अन-आवर्ती चित्राम के आधार पर क्वासी क्रिस्टल का वर्णन किया।

रसायनशास्त्रियों की दृष्टि में आए परिवर्तन के कारण क्वासी क्रिस्टल की अन-आवर्ती चित्रम व्यवस्था फिबोनाकी शृंखला तथा गणित के स्वर्णिम अनुपात की कसौटी पर भी खरी स्वीकार कर ली गई

रसायनशास्त्रियों की दृष्टि में आए परिवर्तन के कारण क्वासी क्रिस्टल की अन-आवर्ती चित्रम व्यवस्था फिबोनाकी शृंखला तथा गणित के स्वर्णिम अनुपात की कसौटी पर भी खरी स्वीकार कर ली गई। अन्ततः 1992 में इन्टरनेशनल यूनियन ऑफ क्रिस्टलोग्राफी ने डैन शेचमैन के दावे को मानते हुए क्रिस्टल की संकुचित परिभाषा को बदल दिया। क्रिस्टल की परिभाषा को अब इतना विस्तृत कर दिया गया है कि भविष्य में होने वाले अनुसंधानों को भी बिना परिवर्तन के उसमें समाहित किया जा सकेगा।

बहुत उपयोगी हैं क्वासी क्रिस्टल

1982 में क्वासी क्रिस्टल की खोज होने के बाद से अब तक सैकड़ों प्रकार के क्वासी क्रिस्टल संश्लेषित किए जा चुके हैं। इनमें अधिकांश मिश्र धातुएं और कुछ पॉलीमर हैं। 2009 में पूर्वी-रूस की एक नदी से एल्यूमिनियम-ताँबा-लोहा मिश्र धातु का एक प्राकृतिक क्वासी क्रिस्टल भी खोज लिया गया है। इसमें 10 वलन प्रतिरूप पाए गए हैं।

विश्व में पाई जाने वाली सर्वोतम स्टील में भी क्वासी क्रिस्टल होते हैं। स्वीडन की एक कम्पनी ने क्वासी क्रिस्टल वाली कठोर स्टील को मृदु स्टील से मिला कर स्टील का एक नया प्रतिरूप प्राप्त किया है जिसका प्रयोग रेजर व ब्लेड बनाने में किया जाएगा। आँखों की शल्य क्रिया हेतु अति पतली सूईयाँ भी इस स्टील से बनाई जा सकेंगी। क्वासी क्रिस्टल काँच की तरह कठोर तथा उसकी ही तरह भंगुर भी होते हैं। ये ऊष्मा व ताप के कुचालक होते हैं, इस कारण इनका उपयोग ताप-विद्युतीय उपकरणों में हो सकेगा। कार व ट्रकों के इंजन में उत्पन्न अनावश्यक उष्मा का भी पुनः उपयोग क्वासी क्रिस्टल की सहायता से किया जा सकेगा। नहीं चिपकने वाले रसोई के बर्तनों में भी इनका उपयोग हो सकेगा। प्रकाश उत्पन्न करने की अब तक की सबसे सस्ती व्यवस्था लाइट-एमिटिंग-डायोड (लेड) में भी इनकी प्रमुख भूमिका रहेगी।

डैन शेचमैन के अनुसंधान को विज्ञान के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना माना जाना चाहिए। एक शायर ने किस घटना से वशीभूत हो इसे लिखा, यह तो ज्ञात नहीं, मगर यह शेर डैन शेचमैन पर एकदम खरा उतरता है -

कुछ लोग थे जो वक्त के
सांचे में ढ़ल गए।
कुछ लोग थे जो वक्त के
सांचे में बदल गए।

संक्षिप्त जीवन परिचय

• **डैन शेचमैन**

क्या-क्या न सहा हमने, विज्ञान की ख़ातिर

24 जनवरी 1941 को तेल-अबीब में जन्मे डैन शेचमैन इजराइल के प्रौद्योगिकी संस्थान टेक्निओन में पदार्थ विज्ञान के प्रोफेसर हैं। इस कार्य के साथ ही ये अमेरिका के ऊर्जा विभाग तथा आयोवा स्टेट विश्वविद्यालय के पदार्थ विज्ञान विभाग से भी जुड़े हैं। इन्होंने टेक्निओन से स्नातक, अधिस्नातक उपाधि के बाद 1972 में वहीं से पीएच. डी. भी की। तीन वर्ष ओहियो में प्रशिक्षण प्राप्त कर ये टेक्निओन में आ गए। 1981-82 में जोन्स होपकिन्स विश्वविद्यालय में तेजी से जमे एल्यूमिनियम संक्रमण मिश्रधातु का अध्ययन करते हुए शेचमैन ने आइकोसाहेड्रल फेज की खोज की। इससे क्वासी-क्रिस्टल का नया क्षेत्र उनके सामने आ गया। क्रिस्टल संरचना की लीक से हट कर, अन-आवर्ती विश्लेषण करने के कारण कई वर्षों तक उन्हें विज्ञान जगत के व्यंग्यवाणों का सामना करना पड़ा। दो बार के नोबल पुरस्कार विजेता लिनस पोलिंग ने तो इन्हें अज्ञानी व क्वासी वैज्ञानिक तक कह दिया था। प्रयोग से प्राप्त अप्रत्याशित परिणामों की चर्चा प्रयोगशाला के प्रभारी से करने पर प्रभारी ने क्रिस्टेलोग्राफी की एक पुस्तक डैन को देते हुए उसे पढ़ने की सलाह दी थी।

एक सच्चे वैज्ञानिक के नाते डैन शेचमैन इन अपमानों को सहन करते हुए भी सत्य के मार्ग पर चलते रहे। उन्होंने पुस्तकों में लिखी बातों की तुलना में अपने प्रयोगों से प्राप्त तथ्यों को अधिक महत्व दिया। क्रिस्टेलोग्राफी के विशेषज्ञ धीरे-धीरे इनकी बातों से सहमत होते गए और नोबल के रूप में अन्ततः इन्हें विश्व मान्यता मिल गई। शेचमैन की पत्नी ट्जीपोरा शेचमैन हैफा विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं। इनके एक पुत्र व तीन पुत्रियाँ उच्च अध्ययन कर विश्व बिरादरी को पिता की तरह ही कोई नई सौगात देने की तैयारी कर रहे हैं।

• भौतिकी

जलेगा नहीं, जमकर नष्ट होगा ब्रह्माण्ड

सूर्य, चाँद, सितारे आदि प्राचीनकाल से मनुष्य को लुभाते रहे हैं। जब इनके विषय में अधिक जानने के साधन नहीं थे तब प्राप्त जानकारी में कल्पना का रस मिला कर कई किस्से कहानियाँ बनाली जाती थी। विज्ञान प्रसार के कारण इनके विषय में तथ्यात्मक जानकारी बढ़ने लगी तो जिज्ञासाएं भी बढ़ती गई। आज बहुत अधिक संसाधन लगाकर विश्व के अनेक श्रेष्ठ मस्तिष्क ब्रह्माण्ड की अनसुलझी पहेलियों को बुझाने में लगे हैं। धरती व आकाश में स्थित अत्यन्त क्षमतावान दूरदर्शियों के साथ ही बहुमूल्य कम्पयूटरों का उपयोग भी अध्ययन हेतु किया जारहा है। 2011 का भौतिकी का नोबल पुरस्कार एक बड़ी पहेली सुलझाने के लिए तीन खगोलशास्त्रियों को देने की घोषणा की गई है।

यह एक अकाट्य तथ्य है कि जो जन्म लेता है उसकी मृत्यु अवश्य होती है। यह बात मनुष्य व जीव-जन्तुओं तक ही नहीं, अपितु असंख्य दुनियाओं के जनक ब्रह्माण्ड पर भी लागू होती है। खगोलविदों की परेशानी यह जानना रहा है कि ब्रह्माण्ड का अन्त कैसे होगा? ब्रह्माण्ड संकुचन के कारण जल कर नष्ट होगा या फैलने से ठण्डा होकर जम कर नष्ट होगा? 2011 का भौतिकी का नोबल पुरस्कार इस खगोल पहेली को सुलझाने के प्रयास के लिए तीन वैज्ञानिकों- साउल मुट्टर, ब्रीआन पी. श्कमीड्ट तथा एडम जी. रीस को देने की घोषणा की गई है।

आइन्सटीन ने स्थिर ब्रह्माण्ड की कल्पना की थी मगर फ्रीडमान ने प्रसार करते ब्रह्माण्ड की बात कह कर आइन्सटीन की बात को पलट दिया था। आज वैज्ञानिक ब्रह्माण्ड का ऊर्जा घनत्व मापने को उत्सुक हैं क्योंकि फ्रीडमान के अनुसार ऊर्जा घनत्व ही ब्रह्माण्ड के भविष्य का निर्धारण करता है। जब तक ऊर्जा घनत्व एक सीमा से अधिक बना रहता है तो ब्रह्माण्ड के

ब्रिआन पी. श्कमीड्ट

एडम गाइ रीस

प्रोफेसर साउल मुट्टर

प्रसार की गति कम होजाती है। गति कम होने पर गैलेक्सियों के मध्य आकर्षण बढ़ जाना है। तब प्रसार गति कम होने के बाद ब्रह्माण्ड संकुचित होने लगता है। अन्त में महा धमाके के साथ जल कर नष्ट होजाता है। यदि ब्रह्माण्ड की ऊर्जा एक सीमा से नीचे बनी रहती है तो ब्रह्माण्ड का प्रसार निरन्तर जारी रहता है। स्पष्ट है कि ब्रह्माण्ड का भविष्य इस बात पर निर्भर है कि उसके प्रसार की गति में कितना मंदन हो रहा है। यह जानने के लिए उसके प्रसार की गति को मापा जाना आवश्यक है।

यह तथ्य सामने आया कि सुपरनोवाओं के अध्ययन से ब्रह्माण्ड के प्रसार की गति के परिवर्तनों को मापा जा सकता है। इसके बाद सुपरनावाओं का उच्च स्तरीय अध्ययन प्रारम्भ किया गया। इसके लिए एक दल साउल पर्लमुट्ट के नेतृत्व में बर्कली में बनाया गया तो दूसरा दल ब्रिआन श्कमिड्ट व एडम रीस के नेतृत्व में हार्वर्ड में काम करने लगा। दोनों दलों ने सुपरनोवा की चमक का अध्ययन कर उनकी दूरी का पता लगाने के प्रयोग किए।

सुपरनोवाओं को प्रारम्भ में हाइड्रोजन की उपस्थिति के आधार पर दो मुख्य भागों में बांटा गया था। बाद में पहले भाग को दो उप समूहों अ व ब में बांट दिया गया। इन दलों ने अपने अध्ययन हेतु 1अ प्रकार के सुपरनोवाओं को चुना। इसका एक बड़ा कारण इस प्रकार की सुपरनोवाओं का हर प्रकार की गेलेक्सी में पाया जाना है। 1अ सुपरनोवा उन श्वेत वामन तारों के नष्ट होने के पूर्व की स्थिति होती हैं जो संहति में तो सूर्य के बराबर होते हैं मगर जिनका आकार मात्र पृथ्वी के बराबर होता है। हम जानते हैं कि जब किसी तारे द्वारा अपने साथी तारे का पदार्थ चुराकर 1.4 सौर संहति की चन्द्रशेखर सीमा को पार कर जाता है वह तारा चमक बिखेर कर नष्ट हो जाता है। तारे की इस अन्तिम स्थिति को ही सुपरनोवा कहते हैं।

श्वेत वामन तारों के चयन का कारण विखण्डन के समय उनका एक समान मानक व्यवहार है। इनकी चमक को देख इनकी दूरी ज्ञात करना सम्भव होता है। एक सुपरनोवा से उत्पन्न प्रकाश सम्पूर्ण गैलेक्सी द्वारा संयुक्त रूप से उत्पन्न प्रकाश के बराबर होता है। जब एडम रीस ने अपने अध्ययन के आकड़ों का संकलन कर उनका विश्लेषण किया तो पाया कि सुपरनोवाओं की चमक उतनी नहीं थी जितनी गणणाओं के अनुसार होनी चाहिए। दोनों दलों ने 50 सुपरनोवाओं की चमक को अपेक्षा से कम पाया था। वे यह जानकर दंग रह गए कि ब्रह्माण्ड के प्रसार की गति कम नहीं हो रही अपितु त्वरित गति से बढ़ रही है। ब्रह्माण्ड का प्रसार महत्वपूर्ण नहीं है। 140 खरब वर्ष पूर्व बिग बेंग द्वारा उत्पन्न होने के बाद से यह ब्रह्माण्ड निरन्तर फैलता रहा है। विशिष्ट बात उसके प्रसार की गति में बढ़ोत्तरी होने की है। ब्रह्माण्ड का प्रसार तेज और तेज होता जा रहा है। इन वैज्ञानिक आंकलनों में कुछ कमियाँ हो सकती हैं मगर दोनों जाँच दलों के एक ही निर्णय पर पहुँचना महत्वपूर्ण है। इसी कारण इस सूचना को विज्ञान जगत में महत्वपूर्ण माना गया है।

इस तथ्य के जानने के बाद भी एडम रीस ने हब्बल अन्तरिक्ष दूरदर्शी से दूरस्त सुपरनोवाओं का अध्ययन जारी रखा। उनके अध्ययन से यह तथ्य सामने आया कि प्रारम्भ में ब्रह्माण्ड प्रसार की

जब ब्रह्माण्ड का प्रसार होता है तो अदीप्त ऊर्जा (डार्क एनर्जी) घनत्व स्थिर रहता है। प्रसार के कारण ब्रह्माण्ड में पदार्थ की तनुता बढ़ती है तो अदीप्त ऊर्जा का प्रभाव बढ़ता जाता है। वैज्ञानिक अनुमान है कि एक बार प्रसार बढ़ना प्रारम्भ होने पर ब्रह्माण्ड के प्रसार की गति निरन्तर बढ़ती जाती है। वैज्ञानिकों का यह भी अनुमान है कि ब्रह्माण्ड का आकार प्रति 100 खरब वर्षों में दुगना हो जाता है। ऐसा अदीप्त ऊर्जा के कारण हो रहा है।

गति अपेक्षानुसार मंद हो रही थी। जब ब्रह्माण्ड का प्रसार होता है तो अदीप्त ऊर्जा (डार्क एनर्जी) घनत्व स्थिर रहता है। प्रसार के कारण ब्रह्माण्ड में पदार्थ की तनुता बढ़ती है तो अदीप्त ऊर्जा का प्रभाव बढ़ता जाता है। वैज्ञानिक अनुमान है कि एक बार प्रसार बढ़ना प्रारम्भ होने पर ब्रह्माण्ड के प्रसार की गति निरन्तर बढ़ती जाती है। वैज्ञानिकों का यह भी अनुमान है कि ब्रह्माण्ड का आकार प्रति 100 खरब वर्षों में दुगना हो जाता है। ऐसा अदीप्त ऊर्जा के कारण हो रहा है। वैसे अदीप्त ऊर्जा का स्वरूप अभी स्पष्ट नहीं है। वैज्ञानिकों की बात पर विश्वास कर हम निश्चिन्त हो सकते हैं कि ब्रह्माण्ड के संकुचित व गर्म होकर जलने की कोई संभावना नहीं है। नष्ट होना उसकी नियती है। अगर सब कुछ आज जैसा ही चलता रहा तो ब्रह्माण्ड ठण्डा होकर जम जाएगा। ब्रह्माण्ड का अन्त जमने से होगा। वैज्ञानिक मानते है कि वर्तमान में ब्रह्माण्ड का कुल 73 प्रतिशत भाग अदीप्त ऊर्जा के रूप में है। इस अध्ययन से ब्रह्माण्ड का मानचित्र तैयार होने के साथ उसके भराव का ज्ञान भी हो सका है। इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट हुआ है कि ब्रह्माण्ड की आयु, पूर्व में अनुमानित आयु से अधिक है। इसे अब 150 खरब वर्ष माना जा रहा है। अब कहा जा सकता है कि ब्रह्माण्ड, ज्ञात वृद्धतम सितारे से भी, वृद्ध है। पूर्व में ब्रह्माण्ड को अपेक्षाकृत युवा माना गया था।

आम व्यक्ति की दृष्टि से तो इस

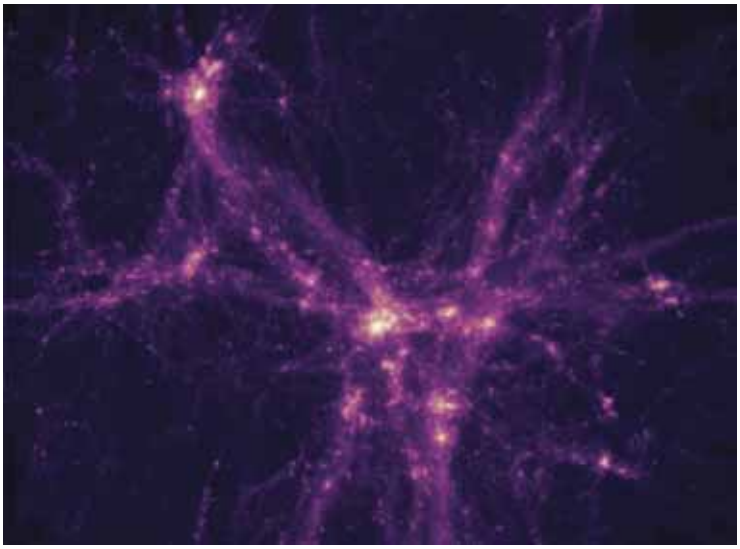

इसके महत्व का अनुमान इस बात से भी लगाया जा सकता है कि एक उपग्रह, मात्र सुपरनोवा अध्ययन को समर्पित किया जाने वाला है। इस क्षेत्र के अध्ययन को पूर्ण गम्भीरता से आगे बढ़ाया जा रहा।

अध्ययन का कोई महत्व नहीं है मगर इससे विज्ञान को एक नई आधारभूत जानकारी मिली है। इस जानकारी के कारण वैज्ञानिक सोच में बदलाव आएगा। इस कारण इस खोज को बहुत महत्व दिया गया है। इसके महत्व का अनुमान इस बात से भी लगाया जा सकता है कि एक उपग्रह, मात्र सुपरनोवा अध्ययन को समर्पित किया जाने वाला है। इस क्षेत्र के अध्ययन को पूर्ण गम्भीरता से आगे बढ़ाया जा रहा अतः कुछ और तथ्य सामने आए तो चौकिएगा नहीं।

संक्षप्ति जीवन परिचय

• प्रोफेसर साउल मुट्टर

सुपरनोवा कास्मोलोजी परियोजना लॉरेंस बर्कली राष्ट्रीय प्रयोगशाला अमेरिका के प्रमुख प्रोफेसर साउल मुट्टर का जन्म 1959 में चैम्पेन अरबाना में

प्रोफेसर साउल मुट्टर

हुआ था। 1986 में इन्होने केलीफोर्निया विश्वविद्यालय से पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त की और सुपरनोवा अध्ययन से जुड़ने के साथ कई अन्य शोध कार्यों में भी लगे रहें हैं। इनमें से एक बर्कली अर्थ सरफेस टेम्प्रेचर प्रोजेक्ट का सम्बन्ध वैश्विक उष्मायन से है। उन्हें शॉ पुरस्कार 2007, ग्रबर कोस्मोलॉजी पुरस्कार 2007, अल्बर्ट आइन्सटीन मेडल 2011 आदि कई अन्य सम्मान मिल चुके हैं। इनकी पत्नी लौरा नेलशन नृपशास्त्री है तथा एक बेटी नोआ है।

• ब्रिआन पी. श्कमीड्ट

सुपरनोवा खोजी अभियान से जुड़े ब्रिआन पी.श्कमीड्ट का जन्म 24 फरवरी

ब्रिआन पी. श्कमीड्ट

1967 मीसौला माउन्टेन अमेरिका में हुआ। बाद में इनका परिवार एकोरेज अलास्का स्थानान्तरित हो गया। इन्होंने स्नातक तथा अधिस्नातक शिक्षा अरिजोना विश्वविद्यालय से प्राप्त की तथा पीएच. डी. हार्वर्ड विश्वविद्यालय से की। 1998 में उन्हें एडम रीस के साथ हाई जेड सुपरनोवा सर्च दल का प्रमुख बनाया गया। इस दल द्वारा त्वरित ब्रह्माण्ड का सिद्धान्त प्रतिपादन करने के कारण विज्ञान जगत में इन्हें प्रसिद्धि प्राप्त हुई। आस्ट्रेलिया सरकार ने इन्हें मेलकॉम मेकन्टाश पुरस्कार 2007, हार्वर्ड विश्वविद्यालय ने बोक पुरस्कार 2000, आस्ट्रेलियन विज्ञान अकादमी ने पॉसे मेडल 2001 प्रदान कर सम्मानित किया है। भारत की एस्ट्रोनोमीकल सोसाइटी ने भी उन्हें वेणु बापू मेडल प्रदान कर सम्मानित किया है। हार्वर्ड में इनकी मुलाकात अर्थशास्त्र की अस्ट्रेलियन छात्र जेनिफर गोरडन से हुई थी। जेनिफर से विवाह कर ब्रिआन 1964 में उसके साथ अस्ट्रेलिया चले गए थे। अभी इनके पास अमेरिका व आस्ट्रेलिया की दोहरी नागरिकता है।

• एडम गाइ रीस

एडम गाइ रीस का जन्म एक यहुदी परिवार में वाशिंगटन अमेरिका में हुआ। दिसम्बर 1969 में जन्में रीस ने मेसाच्यूसेट्स तकनीकी संस्थान से स्नातक

एडम गाइ रीस

होने के बाद केम्ब्रिज से एम.ए. तथा हार्वर्ड से पीएच. डी. की। पीएच. डी. का इनका विषय 1अ प्रकार की सुपरनोवाओं की दूरी ज्ञात करने की विधि का अध्ययन करना था। 1999 में स्पेस टेलिस्कोप साइन्स संस्थान बोल्टीमोर अमेरिका में अनुसंधान कार्य प्रारम्भ किया। 2005 से जोन्स होपकिन्स विश्वविद्यालय में भौतिकी व खगोलशास्त्र के प्रोफेसर बने। 1998 में इन्हें ब्रिआन पी. श्कमीड्ट के साथ हाई जेड सुपरनोवा सर्च प्रोजेक्ट का प्रमुख बनाया गया। बहुत कम समय में ही रीस ने 100 खरब प्रकाश वर्ष दूरी तक के अन्तरिक्ष को तलाश लिया है। साउल मुट्टर तथा ब्रिआन पी.श्कमीड्ट के साथ हार्वर्ड विश्वविद्यालय ने बोक पुरस्कार 2000, शॉ पुरस्कार 2007, ग्रबर कोस्मोलॉजी पुरस्कार 2007, टेम्पलर आवार्ड साझा कर चुके है। जनवरी 1998 में इनका विवाह नैन्सी जोय स्कोनडोर्फ से हुआ।

भारतीय वैज्ञानिक का दावा

डॉ. बी.जी. सिद्धार्थ

देश स्वतन्त्र होने के बाद किसी भी भारतीय वैज्ञानिक को नोबल पुरस्कार नहीं मिला है। स्वतन्त्रता से पूर्व चन्द्रशेखर वेंकटरमन को 1930 का भौतिकी का नोबल पुरस्कार प्राप्त किया था। उन्हें यह पुरस्कार रमन प्रभाव की खोज पर मिला था। विदेशों में कार्य कर रहे भारतीय मूल के नागरिक समय समय पर नोबल पुरस्कार प्राप्त कर भारतीय मेधा का लोहा मनवाते रहे हैं। यदा कदा भारत में कार्यरत वैज्ञानिकों की खोज को नोबल समिति द्वारा अनदेखा करने की शिकायत भी होती रहीं हैं।

इस वर्ष के भौतिकी के नोबल पुरस्कार के विषय में यह दावा बी.एम. बिड़ला विज्ञान संस्थान के महा निदेशक डॉ. बी.जी. सिद्धार्थ ने किया गया है। डॉ. बी.जी. सिद्धार्थ का कहना है कि ब्रह्माण्ड के त्वरित प्रसार के जिस सिद्धान्त के लिए तीन खगोल शास्त्रियों को 2011 का भौतिकी का नोबल प्रदान करने की घोषणा की गई है वैसा सिद्धान्त उन्होंने उन वैज्ञानिको से पूर्व दे दिया था। उन्हें शिकायत है कि नोबल समिति व विश्व वैज्ञानिक समुदाय ने उनके योगदान की उपेक्षा की है। डॉ. सिद्धार्थ के अनुसार उन्होंने 1997 में जेरुसेलम व सिंगापुर में आयोजित विश्व स्तरीय कान्फ्रेंसों में शोध पत्र "दी यूनिवर्स ऑफ फ्लक्चुएशन्स" प्रस्तुत कर अदीप्त ऊर्जा के प्रभाव के कारण ब्रह्माण्ड के त्वरित प्रसार के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था। उनका शोधपत्र इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ मॉर्डन फिजिक्स तथा एस्ट्रोफिजिक्स जर्नल में प्रकाशित भी हुआ है। इस वर्ष के भौतिकी के तीन में से दो विजेता साउल पर्ल मुट्टर तथा एडम रीस उनकी शोध से पूर्णतः वाकिफ रहे हैं। डॉ. सिद्धार्थ का कहना है कि माना उनकी शोध सैद्धान्तिक थी मगर उसकी प्रयोगिक पुष्टि हो गई है। ऐसे में नोबल समिति द्वारा उनकी उपेक्षा समझ से परे है।

संपर्क सूत्र :
श्री विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी एवं रेणुका चतुर्वेदी,
2 तिलक नगर पाली-306 401 (राज.)
[फोन : 09829113431;
ई-मेल :
vishnuprasadchaturvedi20@gmail.com]